इकाई-6

वन्य-समाज और उपनिवेशवाद

प्रारम्भ से ही भारत में वन सम्पदा एक महत्वपूर्ण संसाधन के रूप में रहा है। लगभग बाइस से पच्चीस प्रतिशत भारत की भूमि वनों से आच्छादित है, जहाँ अनेक जातियाँ एवं जनजातियाँ निवास करतीं हैं। ऐसा विश्वास किया जाता है कि ये लोग भारतीय प्रायद्वीप के मूल निवासी हैं। यही बजह है कि उन्हें 'आदिवासी' कहा जाता है। भारत में इनकी आबादी अफ्रिका के बाद सर्वाधिक है। आदिवासियों और वनों के बीच एक सहजीवी सम्बन्ध है। जनजातीय अर्थव्यवस्था एवं संस्कृति के साथ वनों का सम्बन्ध बहुत ही गहरा है। भोजन, ईंधन, लकड़ी, घरेलू सामग्री, जड़ी-बूटी, औषधियों, पशुओं के लिए चारा और कृषि औजारों की सामग्री के लिए ये वनों पर आश्रित रहते हैं। उनकी संस्कृति भी वनों से प्रभावित होती है। वे अनेक वृक्षों की पूजा करते हैं। वन्य समाज में रहने वाले जनजातियों ने अपने आपको वर्ग के आधार पर नहीं बल्कि जातीय आधार पर समाज में रखा है। उदाहरण के लिए पहाड़िया, चेरो, कोल, उराँव, हो, संथाल, चुआर, खरिया, भील, मुंडा आदि।

भारत में भील सबसे बड़ी जनजाति है, जो मध्य प्रदेश, आंध्र प्रदेश, गुजरात, कर्नाटक, राजस्थान एवं त्रिपुरा राज्यों में पायी जाती है। गोंड इस देश की दूसरी बड़ी जनजाति है जो अधिकांशतः मध्य प्रदेश, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र एवं गुजरात में पायी जाती है। संथाल भारत में तीसरी बड़ी ज़नजाति है जो बिहार, झारखंड, उड़ीसा एवं पश्चिम बंगाल में पायी जाती है। इन्हीं प्रदेशों में उरांव, मीना, मुंडा, खोंड आदि जनजातियाँ भी है।

अठारहवीं शताब्दी के पहले तक ये जनजातियाँ वन सम्पदा का प्रयोग अपने जीवीकोपार्जन के लिए करतीं थीं। इनका जीवन बहुत ही सीधा होता था और सामाजिक जीवन में ये लोग अहस्तक्षेप की नीति अपनाते थे। अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक ये विदेशियों के उपनिवेशवाद के शिकार बन गए। यही वजह थी कि उन्होंने उपनिवेशवाद के खिलाफ कई सशस्त्र विद्रोह किए, जिसकी पूर्णाहुति सन् 1857 की क्रांति एवं आगामी क्रांतियों में हुई। यद्यपि आगे चलकर उनके लिए कुछ सुधारात्मक आदेश पारित किए गए, फिर भी सीधे-साधे वन में जीवन व्यतीत करने

वाले आदिवासियों ने अस्त्र-शस्त्र का सहारा क्यों लिया यह जानने के लिए हमें वन्य समाज एवं उनकी तत्कालीन संस्कृति के विभिन्न पहलुओं पर ध्यान देना आवश्यक प्रतीत होता है।

6.1 राजनैतिक जीवन : अठाहरवीं शताब्दी में वन्य समाज कबीलों में बँटा था। सुरक्षा की बढ़ती आवश्यकता के कारण प्रत्येक जनजाति एक मुखिया के तहत संगठित थी। मुखिया का मुख्य कर्तव्य कबीला को सुरक्षा प्रदान करना था। धीरे-धीरे ये मुखिया कबीलों पर अपना अधिकार जमाना शुरू कर दिए। इन्होंने अपने लिए बहुत से विशेषाधिकारों को भी प्राप्त करने में सफलता हासिल कर ली। जनजातियों का मुखिया बने रहने के लिए उनका युद्ध कुशल एवं सुरक्षा देने के कार्य में सक्षम होना अनिवार्य था। इनकी स्वयं की शासन प्रणाली थी। शासन प्रणाली में सत्ता का विकेन्द्रीकरण किया गया था। परम्परागत जनजातीय संस्थाएँ वैधानिक, न्यायिक तथा कार्यपालिका शक्तियों से निहित थी। बिहार के सिंहभूम में 'मानिकी' व 'मुंडा' प्रणालियाँ और संथाल परगना में 'मांझी' व 'परगनैत' प्रणालियाँ आज भी प्रचलित हैं जिनका संचालन मुखियाओं द्वारा किया जाता है। अंग्रेजी शासन के समय उनके द्वारा प्रलोभन दिए जाने के कारण अधिक संख्या में ये मुखिया अंग्रेजों के हिमायती होने लगे और कठोरता से राजस्व वसूली में उनका साथ देने लगे। हालाँकि बाद में राजनैतिक दृष्टिकोण से जब आदिवासियों का शोषण किया जाने लगा तब उन्होंने भी कई जगहों पर समाज के लोगों का साथ दिया ।

> **राजनैतिक जीवन :**
> - मुखिया के तहत कबीलों का गठन
> - सत्ता का विकेन्द्रीकरण
> - राजस्व वसूली के लिए सिंहभूम में 'मानकी' एवं 'मुण्डा' प्रणाली
> - संथाल परगना में 'माझी' एवं 'परगनैत' प्रणाली

सामाजिक जीवन : आदिवासी सीधे-साधे सरल प्रकृति के थे। आमतौर पर वे स्वयं को शेष समाज से अलग रखते थे, लेकिन अंग्रेजों ने उनके सामाजिक जीवन में हस्तक्षेप किया। आर्थिक लाभ के दृष्टिकोण से उन्होंने कबीला के सरदारों को जमींदार का दर्जा दे दिया। वन्य समाज के अन्दर ईसाई मिशनरियों के घुसपैठ को भी बढ़ावा दिया गया, जिससे उनकी सामाजिक व्यवस्था अस्त व्यस्त हो गयी। जंगल से उनके गहरे रिश्ते को भी तोड़ दिया गया। वे जंगलों से लकड़ी काटते थे और उसका प्रयोग ईंधन के रूप में करते थे। पशुओं का चारा भी जंगलों के घास से इकट्ठा करते थे। उनका मुख्य शौक और मनोरंजन का साधन हिरण, तीतर और अन्य छोटे पशु- पक्षियों का शिकार करना था। इनका सामाजिक जीवन इतना सादा था कि ये स्वच्छन्दता पूर्वक जीवन बिताते थे। नाच और गाना इनका महत्वपूर्ण शौक था। ये खेती

> **सामाजिक जीवन :**
> - नृत्य, गान एवं शिकार में अभिरुचि
> - 'सरहुल' मुख्य त्योहार
> - आदिवासियों के शिकार पर प्रतिबन्ध



धनुष बाण से निशाना लगाता आदिवासियों युवक



नृत्य करता हुआ आदिवासी

गृहस्थी करते थे। सामाजिक जीवन में उनके संगीत एवं नृत्यकला पर भी कृषि कार्य के विभिन्न पहलुओं का पूरा प्रभाव था। चैत्र शुक्ल तृतीया तिथि को उनका सबसे महत्वपूर्ण पर्व 'सरहुल' मनाया जाता था, जो आज भी प्रचलित है। आदिवासी समाज की महिलाएँ अपने समाज में पूर्णरूपेण स्वच्छन्द थीं, और जीवीकोपार्जन में वे पुरुषों का हाथ बँटाती थीं।

उपनिवेशवाद की भावना से प्रेरित होकर अंग्रेजी सरकार ने छोटे शिकार पर प्रतिबन्ध लगा दिया, जबकि बड़े जानवरों का शिकार करना मना नहीं था। अंग्रेजों की नजर में बड़े जंगली एवं बर्वर जानवर आदि समाज के प्रतीक चिह्न थे। उनका मानना था कि खतरनाक जानवरों को मारकर वे यहाँ के लोगों को सभ्य बनायेंगे। परिणाम यह हुआ कि जानवरों की कई प्रजातियाँ विलुप्त होने लगी। इस तरह वन्य जीवन के सामाजिक पर्यावरण को उन्होंने नष्ट भ्रष्ट करने की पूरी कोशिश की, जिससे उनके प्रति विरोध का भाव पैदा हुआ ।

आर्थिक जीवन : वन्य समाज के आर्थिक जीवन का आधार कृषि था। वे जगह बदल-बदल कर 'घुमंतू', 'झूम' या पोडू विधि से खेती करते थे। जब उन्हें लगता था कि उनके खेत अब उपजाऊ नहीं रह गए हैं तब वे जंगल

आर्थिक जीवन

- आर्थिक जीवन का आधार खेती
- 'झूम' या 'पोडू' विधि से खेती

साफ कर नई जमीन तैयार कर लेते थे। खेती की इस व्यवस्था से अंग्रेजों को लगान निश्चित करने और उनकी वसूली करने में मुश्किलों का सामना करना पड़ता था। अतः अंग्रेजी सरकार ने इस पर रोक लगा दी। जमीन पर अत्यधिक लगान और उसके वसूली के अत्याचारपूर्ण तरीकों ने आदिवासियों में उनके प्रति क्षोभ उत्पन्न किया। अनेक समुदायों को अपना गृह स्थान परिवर्तित करना पड़ा। बाद में ये लोग अंग्रेजों के खिलाफ कड़ा प्रतिरोध का प्रदर्शन किए।

आदिवासियों में खेती के अलावा अन्य उद्योग धन्धों का भी प्रचलन था। वे हाथी दाँत, बाँस, मशाले, रेशे, रबर, आदि के व्यापार के साथ- साथ लाह तैयार करने का काम भी करते थे। ये पलास, बैर एवं कुसुम के पेड़ पर लाह के कीड़े पालते थे और कारखाने में उससे लाह तैयार किया जाता था। सन्1870 से यहाँ लाह कारोबार की उन्नति होने लगी। ये लोग तसर उद्योग भी करते थे। उन्नीसवीं शताब्दी के आते-आते अंग्रेजों ने रेल की पटरी एवं रेल के डब्बे की सीट बनाने के लिए जंगलों की कटाई शुरू कर दी, जिससे आदिवासी जनजीवन पर कुठाराघात हुआ। डायट्रिच बैडिस नामक जर्मन वन विशेषज्ञ ने सन्1864 में 'वन सेवा' की स्थापना की तथा सन्1865 में 'भारतीय वन अधिनियम' पारित कर आदिवासियों के लिए पेड़ों की कटाई पर रोक लगा दिया गया एवं जंगल को लकड़ी उत्पादन के लिए सुरक्षित किया गया। इससे आदिवासियों के आर्थिक जीवन के साथ-साथ सामाजिक जीवन भी प्रभावित हुआ। अंग्रेजी सरकार ने यहाँ के जमीन से अब राजस्व प्राप्त करने के लिए जमींदारी व्यवस्था लागू की । अब जमींदार, महाजन और साहुकारों द्वारा ये आर्थिक शोषण के शिकार होने लगे। धीरे-धीरे वे किसान से मजूदर होते गए और उनकी आर्थिक स्थिति बद् से बद्तर होते चली गयी। उन्हें कहीं न्याय नहीं मिलता था। पुलिस भी उनकी मदद नहीं करती थी, उल्टे वह महाजनों का ही साथ देती थी। कर्ज के बदले उनके खेत, मवेशी आदि को महाजनों ने हड़प लिया। ऐसे में कभी-कभी इन आदिवासियों को स्वयं को भी गिरवी रखना पड़ता था। फलतः उनका आर्थिक एवं शारीरिक शोषण बढ़ गया। ऐसी परिस्थिति में उन्होंने वर्ग के आधार पर नहीं बल्कि जातीय आधार पर संथाल, कोल, मुंडा, आदि के रूप में अपने आपको संगठित किया। परन्तु इस संगठन के द्वारा कभी भी उन्होंने अपने समूह पर आक्रमण नहीं किया।

- **हाथी दाँत, बाँस, मशाले, रेशे एवं रबर का व्यापार**
- **लाह उद्योग की उन्नति।**
- **सन् 1864 ई० में 'वन सेवा' की स्थापना।**
- **सन् 1865 ई० में 'भारतीय वन अधिनियम' ।**
- **अंग्रेजों द्वारा आर्थिक लाभ के लिए जमींदारी व्यवस्था लागू करना ।**

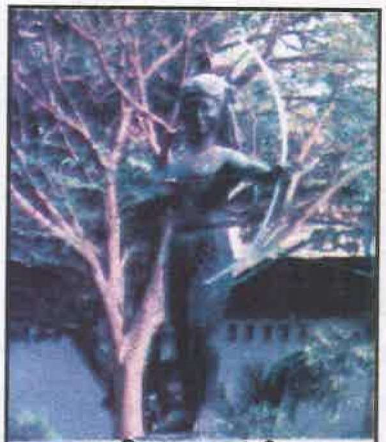
धार्मिक जीवन- वन्य समाज के ये आदिवासी शुरू से ही अहस्तक्षेप की नीति के पोषक थे। अपने समाज के अन्दर किसी भी तरह के विदेशी घुसपैठ को रोकने के लिए वे सशस्त्र तैयार

रहते थे। भारत में अपनी स्थिति सुदृढ़ करने के विचार से वाणिज्यिक उपनिवेशवादी नीति का पालन करते हुए अंग्रेजों ने जनजातीय क्षेत्रों में प्रवेश करने का भरसक प्रयास किया, लेकिन बहुत समय तक वे सफल नहीं हो सके। तभी उन्होंने शिक्षा देने और लोगों को सभ्य बनाने के उद्देश्य से ईसाई मिशनरियों का घुसपैठ जनजातीय क्षेत्रों में कराया ताकि उनके प्रवेश को एक उचित माध्यम मिल जाय। कालान्तर में ये पादरी आदिवासी धर्म एवं संस्कृति की आलोचना करने लगे और उनका धर्म परिवर्तन करना आरम्भ कर दिए। बड़ी संख्या में आदिवासियों ने ईसाई धर्म को अपनाया और अपनी स्थितियों में सुधार की। शिक्षा पाने के कारण उनकी स्थिति में गुणात्मक परिवर्तन तो हुआ, लेकिन वे अपने अन्य भाइयों से घृणा करने लगे। आदिवासी इसे अपने सामाजिक एवं धार्मिक जीवन में अंग्रेजों द्वारा किए गए अतिक्रमण समझ कर इसका प्रतिरोध करना शुरू किए। ऐसे ही परिवेश में वन्य समाज में व्याप्त धार्मिक भावनाओं ने कई क्रांतियों एवं नेताओं को जन्म दिया, जिन्होंने अपने क्षेत्र में अंग्रेजों के प्रति जेहाद का बिगुल बजाया। उन नेताओं का धार्मिक विश्वास था कि ईश्वर उनके कष्टों को दूर करेगा और विदेशियों के शोषण से उन्हें मुक्त करेगा। उनके पास वह जादुई ताकत है, जिससे दुश्मन की गोलियाँ बेअसर हो जायेंगी। इसी तरह का आत्म विश्वास उनके नेताओं में था, जिन्होंने सम्पूर्ण वन्य समाज के आदिवासियों को अंग्रेजों के खिलाफ आन्दोलन करने के लिए भड़काया। ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर अठारहवीं शताब्दी के मध्य में ही बिहार के तत्कालीन छोटानागपुर एवं संथालपरगना क्षेत्रों में प्रवेश करने के अंग्रेजों द्वारा प्रयासों का आदिवासियों ने बलपूर्वक तथा हिंसात्मक तरीकों से विरोध किया।

> **[illegible]**
>
> - **ईसाई मिशनरियों की घुसपैठ एवं धर्म परिवर्तन के लिए आदिवासियों को प्रेरित करना**
> - **धार्मिक भावना पर आघात से सभी जनजातियों में धार्मिक असंतोष**

पहाड़िया विद्रोह : यह जाति युद्धप्रिय थी। इनका निवास स्थान भागलपुर के राजमहल पहाड़ियों के क्षेत्र में था। यहाँ अंग्रेजों ने आरम्भ में मुखिया को जमींदार बना दिया, जिसको राजस्ववसूली का कार्य भी दिया। अंग्रेजों ने साहुकारों, ठेकेदारों, राजस्व, वन तथा पुलिस विभाग के अधिकारियों को इनका शोषण करने के लिए प्रेरित किया, जिसके परिणामस्वरूप इन्हें ऋण-ग्रस्तता तथा अपनी उपजाऊ भूमि का गैर आदिवासियों को हस्तांतरित करने के दौर से गुजरना पड़ा। इसने जनजातियों का आर्थिक आधार तहस नहस कर दिया और उन्हें दरिद्र बना दिया। अत: भारत में पहली बार इस क्षेत्र में जनजातीय विद्रोह हुआ- अपने ही जमींदार के राजस्व नीति के विरोध में। इस विद्रोह का नेता तिलका मांझी था। यह भारत का पहला संथाली (तत्कालीन संथाल

परगना क्षेत्र) था, जिसने न सिर्फ अपने जमींदार का विरोध किया बल्कि अंग्रेजों पर भी हिंसात्मक कार्रवाई की। तिलका मांझी का जन्म 1750 ई० में भागलपुर प्रमंडल स्थित सुल्तानगंज के पास तिलकपुर गाँव में हुआ था। सन् 1779 में वह पहली बार भू राजस्व की राशि कम करने एवं किसानों की भूमि जमींदार से छुड़वाने के लिए वहाँ सशस्त्र विद्रोह किया। जमींदारों की सहायता अंग्रेजी सेना द्वारा की गयी थी। अतः तिलका मांझी ने तिलापुर जंगल को अपना कार्यक्षेत्र बनाया, जहाँ से वह विरोधियों पर आक्रमण की योजना बनाता था। भागलपुर के प्रथम तत्कालीन कलक्टर अगस्टस क्लेवलैंड पर उसने सशस्त्र प्रहार किया। वह नहीं चाहता था कि वन्य समाज एवं पहाड़ी क्षेत्रों के जनजातीय समाज में कोई भी बाहरी व्यक्ति हस्तक्षेप करे, उनका शोषण करे और उनकी सामाजिक तथा धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचाए। पहली बार कलक्टर पर शस्त्र चलाने वाला वह पहला संथाल था जिसने तीर एवं धनुष से सन् 1784 ई० में उसे जख्मी किया, जिससे बाद में क्लेवलैंड की मृत्यु हो गयी।


तिलका मांझी

हिंसात्मक कार्यों एवं अंग्रेजों विरोधी नीति के कारण उसे गिरफ्तार कर लिया गया और सन् 1785 ई० में भागलपुर में बीच चौराहे पर बरगद के पेड़ से लटका कर उसे फाँसी दे दी गयी। तिलका मांझी अपने क्षेत्र की आजादी के लिए शहीद हो गया। हालाँकि, उसके द्वारा किया गया विद्रोह असफल हो गया लेकिन इसने आगे के संथाल विद्रोह का मार्गदर्शन अवश्य किया। तिलका मांझी ने अंग्रेजों द्वारा शोषण और उत्पीड़न के खिलाफ लड़ते हुए अपने प्राण न्योछावर कर देश के लिए उदाहरण प्रस्तुत किया। जिस जगह पर उसे फाँसी दी गयी थी, आज वह तिलका मांझी चौक (भागलपुर) के नाम से जाना जाता है। अमर शहीद तिलका मांझी की मूर्ति गरीब किसानों के अधिकारों की रक्षा हेतु उनके प्राण की आहुति की कहानी कहता नज़र आता है।

तमार विद्रोह– सन् 1789 ई० में छोटानागपुर के उरांव जनजाति ने जमींदारों के शोषण के खिलाफ आन्दोलन किया। इतिहास में यह तमार विद्रोह के नाम से जाना जाता है। यह सन् 1794 तक चलता रहा और अंग्रेजों की सहायता से इसे बहुत ही क्रूरतापूर्ण तरीके से दबा दिया गया। फिर भी विद्रोह की अग्नि समाप्त नहीं हुई। आगे चलकर इनका विरोध मुंडा और संथाल के साथ मिलकर प्रदर्शित हुआ।

चेरो विद्रोह– बिहार में पलामू क्षेत्र में रहने वाले चेरो जनजाति ने अपने राजा के खिलाफ विद्रोह किया। उस समय चुड़ामन राय उनका शासक था। अंग्रेजों की शोषण करने के खिलाफ भूषण सिंह के नेतृत्व में चेर जनजाति के लोगों ने सन् 1800 ई० में खुला विद्रोह किया। राजा की मदद करने के लिए अंग्रेजी सेना बुलाई गयी। कर्नल जोन्स के नेतृत्व में आई सेना ने इस विद्रोह को दबा दिया और सन् 1802 ई० में भूषण सिंह को फाँसी दे दी गयी।

विभिन्न जनजातीय विद्रोह

- पहाड़िया विद्रोह
- तमार विद्रोह
- चेरो विद्रोह
- चुआर विद्रोह
- हो विद्रोह
- कोल विद्रोह
- भूमिज विद्रोह
- संथाल विद्रोह
- मुण्डा विद्रोह
- कंध विद्रोह

चुआर विद्रोह– चुआर जनजाति तत्कालीन बंगाल प्रांत के मिदनापुर, बाँकुड़ा, मानभूम आदि क्षेत्रों में पायी जाती थी। अंग्रेजों की लगान व्यवस्था के खिलाफ इन लोगों में भी असंतोष था। अत: मिदनापुर स्थित करणगढ़ की रानी सिरोमणी के नेतृत्व में चुआरों ने विद्रोह का झंडा खड़ा किया। अंग्रेजों के खिलाफ यह विद्रोह एक लम्बे समय तक जारी रहा। लेकिन सन् 1798 ई० में यह चरमोत्कर्ष पर था। सरकार ने 6 अप्रैल 1799 को रानी सिरोमणी को गिरफ्तार कर कलकत्ता जेल भेज दिया। परन्तु इससे चुआरों के विद्रोह की अग्नि शांत नहीं हुई। आगे चलकर ये भूमिज जाति के लोगों के साथ गंगा नारायण द्वारा किए गए विद्रोह में शामिल हो गए।

'हो' विद्रोह– सन् 1820-21 ई० मे छोटानागपुर के ही सिंहभूम जिले में बहुत बड़ा विद्रोह हुआ। यहाँ का राजा जगन्नाथ सिंह था, जिसने अंग्रेजों का संरक्षण स्वीकार कर लिया था। 'हो' जाति के लोगों ने अंग्रेजों की सहायता से राजा की बढ़ती हुई शक्ति एवं शोषण का विरोध किया। इसे अंग्रेजी सेना ने क्रूरतापूर्ण ढंग से दबा दिया। आगे चलकर इन लोगों ने भी मुंडा विद्रोह में स्वयं को शामिल कर लिया।

कोल विद्रोह– कोल विद्रोह की शुरूआत छोटानागपुर क्षेत्र में मुंडा, उरांव एवं अन्य जनजातियों के द्वारा सन् 1831 ई० में हुआ। भारत के इतिहास में इस विद्रोह की एक अलग महत्ता है। प्रारम्भ से ही यह जनजाति शातिपूर्ण कबिलाई जीवन व्यतीत कर रही थी। बाद में अंग्रेजों की लगान व्यवस्था एवं शोषण नीति उनके जमींदारों द्वारा उनपर लागू कराया गया, तब कोलों ने जमींदार के रूप में 'मानकी' या 'महतो' का विरोध किया। उनके कबीले की प्रथा के अनुसार धर्म निरपेक्ष कार्यो के सम्पादन के लिए 'पाहन' नामक पद सृजित किया गया था। 'मानकी' या 'महतो' उनकी सहायता के लिए बनाये गए थे। ये मानकी जो कभी कोलों का सहयोगी हुआ करते थे,

अंग्रेजों की नीति के कारण जमींदार बन बैठे और लगान नहीं चुकाने के कारण उनका सामाजिक तथा आर्थिक शोषण करना प्रारंभ कर दिए। बड़ी संख्या में हिन्दू, सिक्ख एवं मुसलमान व्यापारियों का प्रवेश इस क्षेत्र में हो चुका था, जिन्होंने धीरे-धीरे सूदखोर महाजन का कार्य करना प्रारंभ किया और धीरे-धीरे कोलो का जमीन उनके हाथ से निकलने लगा। ऐसी स्थिति में जल्द ही जमींदार और दिकू (गैर आदिवासी) के खिलाफ कोलों ने विद्रोह किया । इस विद्रोह की लपट पलामू क्षेत्र में फैलनी शुरू हुई। अनुमानतः 800 से 1000 आदमी इस विद्रोह में मारे गए। जब कोल विद्रोह ने तीव्र रूप धारण कर लिया तब अंग्रेजों का ध्यान इस तरफ आकृष्ट हुआ। यद्यपि विद्रोह तो दबा दिया गया लेकिन अंग्रेजों को यह समझ में आ गया कि कोलों के समाज को नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता है। इस विद्रोह का एक परिणाम तो यह अवश्य हुआ कि कोलों के लिए शोषण विहीन शासन की स्थापना हेतु 'साउथ वेस्ट फ्रंटियर ऐजेंसी' कायम की गयी और फौजदारी न्यायालय को सरल एवं सहज बनाने का आश्वासन दिया गया। आगे चलकर ये कोल भारत की स्वतंत्रता आंदोलन में प्रेरणा के महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में साबित हुए।

भूमिज विद्रोह– सन् 1832 ई० में वीरभूम के जमींदार के पुत्र गंगा नारायण के नेतृत्व में भूमिज विद्रोह की शुरूआत हुई। यह 'गंगा नारायण हंगामा' के नाम से इतिहास में जाना जाता है। अंग्रेजी सरकार ने इनपर इतना अधिक राजस्व का बोझ डाला था कि उसके खिलाफ 'कोलों' एवं 'हो' के समर्थन से इन्होंने भी औपनिवेशिक शासक का विरोध किया। उपरोक्त सारी जनजातियों ने सन् 1857 ई० के सिपाही विद्रोह में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। जब विद्रोह शुरू हुआ तब ये चाइबासा के बटालियन की सेना में शामिल थे। इन्होंने राँचो और डोरंडा के खजानों को लूटा तथा जेल के फाटक को खोल दिया। अंग्रेजों का हर सम्भव विरोध इन्होंने अपने अधिकारों की सुरक्षा के लिए किया।

संथाल विद्रोह : आदिवासियों द्वारा किए गए विद्रोहों में संथाल विद्रोह बहुत महत्वपूर्ण था, क्योंकि विद्रोह की पहली शुरूआत इसी क्षेत्र के लोगों द्वारा की गयी थी और यहीं के विद्रोहियों ने आगे चलकर सन् 1857 ई० की क्रांति को प्रभावित किया। भागलपुर से राजमहल के बीच का क्षेत्र, जो दामन-ए-कोह के नाम से जाना जाता था, संथाल बहुल क्षेत्र था। गैर-आदिवासी एवं अंग्रेजों के अत्याचार से तंग आकर यहाँ के संथालों ने अपने आपको संगठित कर लिया। संथालों को उत्प्रेरित करने का कार्य भगनाडीह गाँव के चुलू संथाल के चार पुत्र-सिद्धू, कान्हू, चाँद और भैरव ने किया। सिद्धू ने अपने आपको ठाकुर का अवतार घोषित किया। सन् 1854 ई० तक आते-आते आदिवासियों ने चिरस्थाई प्रबन्ध द्वारा अत्यधिक राजस्व वसूली, सामाजिक प्रतिबन्ध और कई तरह के आर्थिक कष्टों से छुटकारा पाने के लिए कई सभाओं का आयोजन करना आरम्भ कर दिया।

30 जून 1855 को भगनाडीह गाँव में संथालों की एक सभा आयोजित की गयी। इसमें 400 गाँवों के 10,000 संथाल अपने अस्त्र-शस्त्र के साथ एकत्र हुए और सभा में ठाकुर का आदेश पढ़कर सुनाया गया। यह आदेश था-'जमींदारी, महाजनी तथा सरकारी अत्याचारों का विरोध करना तथा अंग्रेजी शासन को समाप्त कर सतयुग का राज, न्याय और धर्म पर अपना राज करने के लिए खुला विद्रोह किया जाये। सिद्धू और कान्हू ने स्वतंत्रता की घोषणा भी की। यह कहा गया कि 'अब हमारे ऊपर कोई सरकार नहीं है, हाकिम नहीं है, संथाल राज्य स्थापित हो गया है। इन आदिवासियों ने मिलकर गाँवों में जुलूस निकाले।



सिद्धू

जुलाई, 1855 ई० में स्त्री एवं पुरुषों के आह्वान पर संथालों का विद्रोह आरम्भ हो गया। बहुत जल्द ही लगभग 60 हजार हथियार बंद संथालों को इकट्ठा कर लिया गया। इसके लिए हजारों आदिवासियों को तैयार रहने के लिए भी कहा गया। सशस्त्र विद्रोह का आरम्भ दीसी नामक स्थान में अत्याचारी दरोगा महेश लाल की हत्या से आरम्भ हुआ। सरकारी दफ्तरों, महाजनों के घर तथा अंग्रेजों की बस्तियों पर आक्रमण किया गया।

संथालों का सबसे बड़ा असंतोष भागलपुर से लेकर वर्द्धमान तक की रेल परियोजना थी। इसमें ठेकेदारों ने बड़े पैमाने पर मजदूरों को काम पर लगाया, पर उचित मजदूरी नहीं दी, जब संथालों ने काम करने से इन्कार कर दिया तब उन्हें बुरी तरह पीटा गया। विद्रोहियों ने रेल ठेकेदारों एवं परियोजना के इंजीनियरों के साथ बुरा व्यवहार किया क्योंकि वे उन्हें बेगार मजदूरी के लिए बाध्य करते थे। उनके द्वारा भागलपुर और राजमहल के बीच रेल सेवा भंग कर दी गयी। अनेक अंग्रेज मार डाले गए। संथालों ने उन सभी लोगों और व्यवस्थाओं पर हमला किया जो गैर आदिवासी (दिकू) और उपनिवेशवादी सत्ता के शोषण के खिलाफ थे।

आदिवासियों के इस तरह के संगठित विद्रोह से अंग्रेज डर गए और वे कलकत्ता तथा पूर्णिया से सेना बुलाकर इस विद्रोह को कुचल डाले। कान्हू सहित 5000 से अधिक संथाल मार दिए गए। अंग्रेजों की बर्बरता ने संथालों के गाँव के गाँव उजाड़ डाले और उपद्रवग्रस्त क्षेत्रों में मार्शल लॉ लागू किया गया। सिद्धू और अन्य नेता गिरफ्तार कर लिए गए। इस विद्रोह में संथालों ने अदम्य साहस का परिचय दिया, परन्तु फिर भी विद्रोह असफल हो गया क्योंकि युद्ध की

आधुनिक तकनीकी इनके पास नहीं थी। ये अधिकांशतः तीर धनुष से ही लड़ते थे। जब सन् 1857 की क्रांति की शुरूआत हुई तब ये संथाल विद्रोहियों के साथ थे और अंग्रेजों के खिलाफ उनका साथ दे रहे थे।

यद्यपि संथाल विद्रोह से आदिवासियों के जीवन तथा स्थिति में कोई विशेष परिवर्तन नहीं आया लेकिन अंग्रेजी सरकार को इस क्षेत्र के लिए नयी प्रशासनिक नीति को अपनाना पड़ा। सन् 1885 ई० में 'अधिनियम 37' पारित किया गया जिसके अनुसार संथाल परगना जिला बनाकर उसे 'वहिर्गत क्षेत्र' (Excluded Area) घोषित किया गया और इसको प्रत्यक्ष रूप से गवर्नर जनरल के शासन के अधीन रखा गया।

मुंडा विद्रोह– सन् 1899- 1900 में छोटानागपुर में मुंडा आदिवासियों ने उपनिवेशवाद का विरोध किया। इस विद्रोह का नेतृत्व बिरसा मुंडा ने किया। बिरसा मुंडा का जन्म 15 नवम्बर 1874 को पलामू जिले के तमाड़ के निकट उलिहातु नामक गाँव में हुआ था। बचपन से ही वह कुशाग्र बुद्धि का था। उसने आदिवासियों की गरीबी और शोषण पर गहन चिंता व्यक्त की और इसके लिए औपनिवेशिक शासन के भू-राजस्व प्रणाली, न्यायप्रणाली एवं शोषणपूर्ण नीतियों का समर्थन करने वाले जमींदारों के प्रति आक्रोशित हुआ। उस पर धर्म का भी बहुत प्रभाव था तथा उसे ईश्वर में अटूट विश्वास था। अतः सन् 1895 ई० में उसने अपने आपको ईश्वर का दूत घोषित कर दिया। धार्मिक आन्दोलन के आधार पर बिरसा मुंडा ने सभी आदिवासियों को हथियार बन्द करना शुरू कर दिया और उन्हें उनके अधिकारों के प्रति सजग कराया। मुंडा जाति के साथ-साथ अन्य जनजातियों में भी उसने जागरूकता पैदा की और उन्हें संगठित किया। 25 दिसम्बर सन् 1899 ई० को उसने ईसाई मिशनरियों पर आक्रमण किया। 8 जनवरी सन् 1900 ई० को ब्रिटिश सरकार द्वारा इस विद्रोह को बुरी तरह कुचल दिया गया। 200 पुरुष एवं महिला मारे गए तथा 300 लोग बन्दी बना लिए गए। कई नेताओं को भी गिरफ्तार कर लिया गया। बिरसा मुंडा की गिरफ्तारी के लिए सरकार की तरफ से 500 रुपये इनाम की घोषणा की गयी और परिणामस्वरूप 3 मार्च सन् 1900 ई० को बिरसा गिरफ्तार कर लिया गया और राँची जेल में जून में, हैजा से उसकी मृत्यु हो गयी।



बिरसा मुंडा

ब्रिटिश सरकार की दमन नीति ने बिरसा मुंडा का विद्रोह तो कुचल दिया, लेकिन इस आन्दोलन का प्रभाव अंग्रेजी शासन पर महत्वपूर्ण रूप से पड़ा। ब्रिटिश सरकार के लिए यह एक चेतावनी थी। सरकार ने मुंडा एवं अन्य जनजातियों के असंतोष को दूर करने की ठोस व्यवस्था की । बिरसा आन्दोलन का परिणाम यह हुआ कि जनजातियों के बीच एक जिम्मेवार और उत्तरदायी शासन स्थापित हुआ। आगे चलकर यही आन्दोलन स्वंतत्रता आन्दोलन में भाग ले रहे ताना भगत के आन्दोलन (सन् 1914) का प्रेरणा स्रोत बना। आदिवासियों के लिए कई सुधारात्मक कार्य सरकार द्वारा किए गए।

कंध विद्रोह– उपरोक्त विद्रोह के अलावे उड़ीसा राज्य का कंध विद्रोह भी बहुत महत्वपूर्ण है। कंध आदिवासी विशाल पहाड़ी क्षेत्र में रहते थे, जो तत्कालीन मद्रास प्रांत तथा बंगाल तक फैला था। इस जाति में विपत्तियों एवं आपदाओं से मुक्ति प्राप्त करने के लिए 'मरियाह प्रथा' (मानव बलि प्रथा) का प्रचलन था। सन् 1837 ई० में ब्रिटिश सरकार ने इसे रोकने का प्रयास किया। उस समय चक्र बिसोई नामक नेता ने इसका विरोध किया। चक्र बिसोई का जन्म घुमसार के ताराबाड़ी नामक गाँव में हुआ था। उसने अंग्रेजों पर आदिवासियों के सामाजिक एवं धार्मिक प्रथाओं में हस्तक्षेप करने का आरोप लगाया और उनका प्रबल विरोध किया। सन् 1857 ई० की क्रांति में कंध आदिवासियों ने भी अंग्रेजों के खिलाफ सैन्य संचालन किया।

उड़ीसा के ही भुइयां एवं जुआंग आदिवासियों ने वहाँ के राजा की सामन्तवादी एवं दमनकारी नीति के खिलाफ विद्रोह किया। सन् 1867-68 ई० में धरनीधर नायक के नेतृत्व में विद्रोह का झंडा खड़ा किया गया।

भारत के अन्य वन्य प्रदेशों में भी औपनिवेशिक शोषण के खिलाफ विद्रोह हुआ। सन् 1879-80 ई० में आंध्र प्रदेश के आदिवासियों ने अत्यधिक लगान वसूली के खिलाफ तथा 'वेट्टी प्रथा' (बलात मजदूर प्रथा) के खिलाफ विद्रोह किया। मध्य प्रांत के भील तथा गोंड जातियों ने भी अपने अस्तित्व के लिए ब्रिटिश शासन के प्रतिरोध में आन्दोलन किया।

परिणामस्वरूप, सन् 1935 ई० में तत्कालीन विधान सभा द्वारा जनजाति के लिए शिक्षा और आरक्षण का प्रस्ताव पारित किया गया। स्वतंत्र भारत के संविधान ने भारत की जनजातियों को धारा 342 में कमजोर वर्ग का दर्जा देकर उनके लिए सभी तरह की सुविधाएँ एवं आरक्षण की व्यवस्था की है। सन् 1952 ई० में सरकार ने 'नई वन नीति' बनायी जिसका समय-समय पर संशोधन भी किया जाता रहा है। यह वनों की रक्षा तथा आदिवासियों के अधिकारों की रक्षा के लिए उठाया गया भारत सरकार का एक महत्वपूर्ण कदम है।

यद्यपि वन्य समाज में जीवन व्यतीत करने वाले आदिवासी औपनिवेशिक शोषण से तो मुक्त हो गए लेकिन आंदोलन थमा नहीं, सिर्फ स्वरूप में परिवर्तन आ गया। यह आन्दोलन क्षेत्रवादी आन्दोलन में बदल गया और वे अलग राज्य की मांग करना शुरू कर दिए। भारत सरकार ने उनकी लम्बित माँगों को ध्यान में रखते हुए मध्य प्रदेश राज्य का पुनर्गठन करके 1 नवम्बर सन् 2000 ई० को आदिवासी बहुल क्षेत्र का एक पृथक राज्य छत्तीसगढ़ बनाया। इसी तरह 15 नवम्बर सन् 2000 ई० को बिहार राज्य का पुनर्गठन करके आदिवासी बहुल क्षेत्र झारखंड को एक अलग राज्य का दर्जा दे दिया गया।

इस तरह हम देखते हैं कि वन्य समाज में निवास करने वाली जनजातियों ने औपनिवेशिक शोषण के खिलाफ एक संघर्षपूर्ण लड़ाई लड़ी, जिसने भविष्य में उनके लिए सुधार कार्यों का मार्ग प्रशस्त किया।

अभ्यास

I. वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. भारतीय वन अधिनियम कब पारित हुआ ?
   - (क) 1864
   - (ख) 1865
   - (ग) 1885
   - (घ) 1874
2. तिलका मांझी का जन्म किस ई0 में हुआ था?
   - (क) 1750
   - (ख) 1774
   - (ग) 1785
   - (घ) 1850
3. तमार विद्रोह किस ई0 में हुआ था?
   - (क) 1784
   - (ख) 1788
   - (ग) 1789
   - (घ) 1799
4. 'चेरो' जनजाति कहाँ की रहने वाली थी?
   - (क) राँची
   - (ख) पटना
   - (ग) भागलपुर
   - (घ) पलामू
5. किस जनजाति के शोषण विहिन शासन की स्थापना हेतु 'साउथ वेस्ट फ्रंटियर एजेंसी' बनाया गया था?
   - (क) चेरो
   - (ख) हो
   - (ग) कोल
   - (घ) मुण्डा

6. भूमिज विद्रोह कब हुआ था?

(क) 1779 (ख) 1832

(ग) 1855 (घ) 1869

7. सन् 1855 के संथाल विद्रोह का नेता इनमें से कौन था ?

(क) शिबू सोरेन (ख) सिद्धू

(ग) बिरसा मुंडा (घ) मंगल पांडे

8. बिरसा मुंडा ने ईसाई मिशनरियों पर कब हमला किया ?

(क) 24 दिसम्बर 1889 (ख) 25 दिसम्बर 1899

(ग) 25 दिसम्बर 1900 (घ) 8 जनवरी 1900

9. भारतीय संविधान के किस धारा के अन्तर्गत आदिवासियों को कमजोर वर्ग का दर्जा दिया गया है ?

(क) धारा 342 (ख) धारा 352

(ग) धारा 356 (घ) धारा 360

10. झारखंड को राज्य का दर्जा कब मिला ?

(क) नवम्बर 2000 (ख) 15 नवम्बर 2000

(ग) 15 दिसम्बर 2000 (घ) 15 नवम्बर 2001

II. खाली जगहों को भरें :

1. जनजातियों की सर्वाधिक आबादी .... में है।
2. अठारहवीं शताब्दी में वन्य समाज कई .... में बँटा था।
3. वन्य समाज में शिक्षा देने के उद्देश्य से .... में घुसपैठ की।
4. जर्मन वन विशेषज्ञ डायट्रिच बैडिस ने सन् 1864 ई० में .... की स्थापना की।
5. .... पहला संथाली था, जिसने अंग्रेजों पर हथियार उठाया।
6. 'हो' जाति के लोग छोटानागपुर के .... के निवासी थे।
7. भागलपुर से राजमहल के बीच का क्षेत्र .... कहलाता था।
8. सन् .... ई० में संथाल विद्रोह हुआ ।

9. बिरसा मुंडा का जन्म .... को हुआ था ।

10. छत्तीसगढ़ राज्य का गठन .... को हुआ था ।

III. लघु उत्तरीय प्रश्न

1. वन्य समाज की राजनैतिक स्थिति पर प्रकाश डालें ।
2. वन्य समाज का सामाजिक जीवन कैसा था ?
3. अठारहवीं शताब्दी में वन्य समाज का आर्थिक जीवन कैसा था?
4. अठारहवीं शताब्दी में ईसाई मिशनरियों ने वन्य समाज को कैसे प्रभावित किया ?
5. 'भारतीय वन अधिनियम' का क्या उद्देश्य था ?
6. 'चेरो' विद्रोह से आप क्या समझते हैं ?
7. 'तमार' विद्रोह क्या था ?
8. 'चुआर' विद्रोह के विषय में लिखें।
9. उड़ीसा के जनजाति के लिए चक्र बिसोई ने क्या किए?
10. आदिवासियों के क्षेत्रवादी आन्दोलन का क्या परिणाम हुआ?

IV. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. अठारहवीं शताब्दी में भारत में जनजातियों के जीवन पर प्रकाश डालें ।
2. तिलका मांझी कौन थे? उसने आदिवासी क्षेत्र के लिए क्या किया ?
3. संथाल विद्रोह से आप क्या समझते हैं? सन् 1857 ई० के विद्रोह में उनकी क्या भूमिका थी ?
4. मुंडा विद्रोह का नेता कौन था । औपनिवेशिक शोषण के विरुद्ध उसने क्या किया ?
5. वे कौन से कारण थे, जिन्होंने अंग्रेजों को वन्य-समाज में हस्तक्षेप की नीति अपनाने के लिए वाध्य किया ?